10. भारतीय समाजशास्त्री

अभी तक हमने जिन विचारकों के बारे में पढ़ा था वे सभी पश्चिमी देशों के थे। इस इकाई में हम उन विचारकों के बारें में जानेंगे जो भारतीय मूल के थे तथा जिन्होंने भारतीय समाज में रहकर भारतीय समाज के विभिन्न पहलुओं पर समाजशास्त्रीय अध्ययन किया।

गोविन्द सदाशिव घुर्ये (1893–1983)

गोविन्द सदाशिव घुर्ये का बौद्धिक एवं अकादमिक क्षेत्र में बड़ा नाम है। भारतीय समाजशास्त्र में इनका अपूर्व योगदान रहा है। इसीलिए इन्हें भारतीय समाजशास्त्र का जनक कहा जाता है। इन्होंने न केवल भारत में समाजशास्त्र को स्थापित किया वरन् ऐसे छात्रों को भी तैयार किया जिन्होंने देश में समाजशास्त्र के समाजशास्त्रीय शोध तथा सिद्धान्तों के द्वारा भारतीय समाजशास्त्र को मजबूती प्रदान की।

घुर्ये का जन्म 12 दिसम्बर 1893 में महाराष्ट्र के मालवा क्षेत्र के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। वे अपने बाल्यकाल से ही प्रतिभाशाली थे। सन् 1918 में एम.ए. की परीक्षा मुम्बई के एलिफस्टन महाविद्यालय से प्रथम श्रेणी में प्राप्त की। इसके बाद इसी महाविद्यालय में प्राध्यापक के रूप में अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया। इसी दौरान इन्होंने 1919 में पैट्रिस गिडीज को मुम्बई विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र को विकसित करने का निमन्त्रण दिया। जब गिडिज ने मुम्बई में समाजशास्त्र की स्थापना की उसी दौरान घुर्ये अपने डाक्ट्रेट पद के लिए लन्दन में आ गये। जहां हैडन के निर्देशन में ''रेस एण्ड कास्ट इन इण्डिया'' नामक विषय पर डाक्ट्रेट की उपाधि प्राप्त की।

डाक्ट्रेट की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् उन्हें 1924 में मुम्बई विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र विभाग के रीडर एवं विभागाध्यक्ष पद पर नियुक्ति दी गई। 1934 में इसी विश्वविद्यालय में प्रोफेसर पद पर नियुक्त हुए तथा 1959 तक लगातार प्रोफेसर पद को सुशोभित किया। सेवानिवृत्ति के बाद भी मुम्बई विश्वविद्यालय ने घुर्ये के लिए एक नया पद प्रोफेसर ''एमरीटस'' का सृजन किया गया।

घुर्ये की प्रमुख कृतियां

1. कास्ट एण्ड रेस इन इण्डिया 1932
2. सेक्स हेबिट्स ऑफ मिडिल क्लास पिपल 1938
3. दि एबओरिजनल्स सो–काल्ड एण्ड दियर फ्यूचर
4. कल्चर एण्ड सोसायटी 1945
5. आफ्टर ए सेन्चुरी एण्ड ए क्वार्टर 1960
6. कास्ट क्लास एण्ड ओक्युपेशन 1961
7. फैमिली एण्ड किन इन इण्डो यूरोपियन कल्चर 1962
8. सिटीज एण्ड सिविलाइजेशन 1962
9. दि शिड्युल्ड ट्राइब्ज 1963
10. दि महादेव कोलिज 1963
11. एनोटोमो ऑफ ए रूरल कम्युनिटी 1963
12. दि इण्डियन साधुज 1964
13. सोशियल टेन्शन्स इन इण्डिया 1968
14. आई एण्ड अदर एक्सप्लोरेशन्स 1973
15. विदर इण्डिया 1974
16. इण्डिया रिक्रियेट्स डेमोक्रेसी 1978
17. वैदिक इण्डिया 1979
18. दि बर्निंग केल्ड्न ऑफ दि नोर्थ ईस्ट इण्डिया

घुर्ये का योगदान–

1. भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता।
2. प्रजाति।
3. धर्म।
4. जाति एवं नातेदारी व्यवस्था।
5. आदिवासी अध्ययन।
6. ग्रामीण नगरीकरण।
7. भारतीय साधु।
8. सामाजिक तनाव।
9. भारतीय वेशभूषा।
10. संघर्ष और समन्वयता का समाजशास्त्र।

प्रजाति एवं जाति–

घुर्ये सभ्यता के विकास के अध्ययन में विशेषज्ञ थे। उनकी रुचि सभ्यताओं के तुलनात्मक अध्ययन में थी। ऐसा करने में भी उनके अध्ययन का केन्द्रीय बिन्दु भारतीय समाज ही था। भारतीय समाज में भी प्रजाति एवं जाति मुख्य थी। उन्होंने इसी बात को अपनी पुस्तक कास्ट एण्ड रेस इन इण्डिया में प्रस्तुत किया। उन्होंने प्राचीन विद्वानों द्वारा प्रस्तुत मानव जाति के अध्ययनों के आधार पर यह बताया कि भारत में इण्डो आर्यन प्रजाति 2500 ईसा पूर्व में आई थी। इस प्रजाति का धर्म वैदिक धर्म था। इस प्रजाति के लोग मुख्य रूप से ब्राह्मण थे जो गंगा नदी के मैदानी क्षेत्र में रहकर उन्होंने अपनी संस्कृति को विकसित किया। यह संस्कृति आगे चलकर हिन्दू संस्कृति के रूप में विकसित हुई।

घुर्ये प्रजाति की अवधारणा के सम्बन्ध रिजले से प्रभावित हुइ क्योंकि उसी समय प्रजाति के ऊपर रिजले की पुस्तक

प्रकाशित हो चुकी थी। उसी आधार पर ही रिजले ने भारत में जाति को शारीरिक लक्षणों में रक्त समूह, खोपड़ी का घनत्व, नाक की लम्बाई, चौड़ाई, आँखों की बनावट, त्वचा का रंग, कद आदि पर परिभाषित किया। लेकिन घुर्ये ने रिजले को अस्वीकार किया तथा यह स्थापित किया कि प्रजाति को जाति से नहीं जोड़ा जा सकता है।

जाति निर्धारण में शारीरिक लक्षणों, खोपड़ी का घनत्व, त्वचा का रंग आदि विभिन्नता जाति व्यवस्था के लिए उपयुक्त नहीं है, क्योंकि काली त्वचा वाला व्यक्ति किसी भी जाति का हो सकता है।

घुर्ये ने अपनी पुस्तक की शुरूआत तो प्रजाति से की लेकिन अन्त में वह प्रजाति के स्थान पर जाति पर आ गये जब उन्होंने उनकी एक अन्य महत्वपूर्ण पुस्तक जाति वर्ग व व्यवसाय में भारत में जाति व्यवस्था पर विस्तृत चर्चा की है। जाति जिसे अंग्रेजी में कास्ट कहते हैं। ''कास्ट'' शब्द की उत्पत्ति पुर्तगाली भाषा के कास्टा से हुई है। जिसका अर्थ मत विभेद तथा जाति से लिया जाता है। घुर्ये ने जाति व्यवस्था को अन्तर्विवाही समूह के रूप में परिभाषित किया है। अर्थात् कोई भी व्यक्ति अपनी जाति के अन्दर ही विवाह करता है। लेकिन अपनी गोत्र को छोड़कर घुर्ये ने जाति की छः प्रमुख विशेषताएँ बतलाई है जो निम्न है–

1. समाज का खण्डात्मक विभाजन

जाति व्यवस्था में भारतीय समाज को विभिन्न खण्डों में विभाजित कर दिया है। और प्रत्येक खण्ड के सदस्यों की स्थिति पद और कार्य निश्चित है। अर्थात् समाज विभिन्न जाति खण्डों में विभाजित होता है। और जातियाँ विभिन्न उपखण्डों में विभाजित होती है। उदाहरण के लिए भारत में चार प्रमुख वर्ण थे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र। ब्राह्मण वर्ण में भी कई उपखण्ड उन उपखण्ड में कई खण्ड बने होते हैं। इन खण्डों व उपखण्डों के आधार पर ही ब्राह्मणों के कार्यों का विभाजन होता है। अर्थात् कौन अध्ययन अध्यापन का कार्य, धर्मकाण्ड सम्बन्धित कार्य, पूजा अर्चना सम्बन्धित कार्य या भिक्षावृत्ति सम्बन्धित कार्यों का विभाजन होता है उसी अनुरूप उनकी समाज में प्रस्थिति प्राप्त होती है।

2. संस्तरण–

जाति व्यवस्था समाज का खण्डात्मक विभाजन करती है तो उसका तात्पर्य यह नहीं, वे सभी एक समाज है वरन् उनमें ऊँच–नीच का एक संस्तरण पाया जाता है। जाति व्यवस्था जन्म पर आधारित होती है इसलिए इस संस्तरण में स्थिरता एवं दृढ़ता देखी जा सकती है।

3. भोजन तथा सामाजिक सहवास पर प्रतिबन्ध–

घुर्ये के अनुसार जाति व्यवस्था में परस्पर जातियों में भोजन एवं व्यवहार से सम्बन्धित उनके निषेध पाये जाते हैं जातियों में ऐसे नियम हैं उसके सदस्य किन–किन जातियों के यहां कच्चा, पक्का तथा फलाहारी भोजन कर सकते हैं, किनके हाथ का भोजन कर सकते हैं, किनके यहां पानी पी सकते हैं, किनके साथ बैठकर बीड़ी–सिगरेट पी सकते हैं आदि।

4. नागरिक एवं धार्मिक निर्योग्यताएँ एवं विशेषाधिकार–

जाति व्यवस्था ने मनुष्य और मनुष्य के बीच जाति व्यवस्था के तथाकथित उच्च–निम्न के संस्तरणों को लादकर सामाजिक समानता के भाव को ठेस पहुँचाई है।

5. निश्चित व्यवसाय–

घुर्ये ने जाति की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह बतलाई है कि प्रत्येक जाति का अपना एक निश्चित व्यवसाय होता है जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होता रहता है। कई जातियों के नाम से ही उसके व्यवसाय का पता चलता है जाति व्यवस्था में यह नियम है कि व्यक्ति अपने जातिगत व्यवसाय को करते हुए ही अपना जीवन यापन कर सकता है। वह अपना व्यवसाय नहीं बदल सकता है।

6. विवाह सम्बन्धी प्रतिबन्ध–

घुर्ये ने अपनी जाति की परिभाषा में ही जाति की इस विशेषता को उल्लेखित किया, जाति एक अन्तर्विवाही समूह है अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति अपनी ही जाति में विवाह करता है। हालांकि अपनी जाति में विवाह करते समय वह यह ध्यान रखता है जिस स्त्री पुरुष से वह विवाह कर रहा है वह उसी गोत्र का तो नहीं है। जिस गोत्र का वह है अर्थात् व्यक्ति अपनी गोत्र से बाहर तथा जाति के अन्दर ही विवाह करता है।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि घुर्ये ने जाति की विस्तृत व्याख्या की है। इसके साथ ही उन्होंने यह भी बताया कि जाति का निर्धारण जन्म से होता है इसलिए जाति एक प्रदत्त प्रस्थिति न कि अर्जित प्रस्थिति।

वर्तमान समय में जाति का निर्धारण तो जन्म से ही हो रहा है फिर भी इस व्यवस्था में कई परिवर्तन आ चुके हैं। जाति व्यवस्था में संस्तरण जैसा पहलु अब दिखाई नहीं देता है अब संस्तरण के स्थान पर जातिवाद आ गया है जिसको प्रत्येक जाति अपने आप को दूसरी जाति से श्रेष्ठ समझती है। इसी प्रकार व्यवसाय रूपी विशेषता में भी परिवर्तन आ गया है अब प्रत्येक व्यक्ति अपने परम्परागत व्यवसाय को छोड़कर नये–नये व्यवसाय कर अपनी आजीविका कमा रहा है। हमारे संविधान में भी यह प्रावधान है कि सरकार या राज्य किसी भी व्यक्ति के साथ धर्म जाति, लिंग आदि के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा। अतः सभी जातियों को समान अधिकार है तथा किसी जाति की निर्योग्यता नहीं है। सभी जाति के व्यक्ति देश के किसी भी मन्दिर में जा सकते हैं उनको कोई रोक–टोक नहीं है। इसी प्रकार धीरे–धीरे व्यवहार सम्बन्धित प्रतिबन्ध भी समाप्त हो रहा है। व्यक्ति अपनी जाति को छोड़कर किसी भी जाति में विवाह करने के लिए स्वतंत्र है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि जाति व्यवस्था में वर्तमान में आमूल–चूल परिवर्तन हो रहा है इस व्यवस्था के

स्थान पर वर्ग व्यवस्था स्थापित हो रही है। इसमें विभिन्न जाति के व्यक्ति एक साथ व्यवसाय और भोजन करते हैं जिसका मुख्य कारण संविधान, नगरीयकरण, पश्चिमीकरण, शिक्षा का बढ़ावा, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, लोकतंत्र, धार्मिक आन्दोलन, जाति पंचायतों का ह्रास, स्त्री शिक्षा का प्रसार आदि है।

डी.पी. मुकर्जी (1894–1961)

धुर्जति प्रसाद मुकर्जी जिन्हें प्यार से डी.पी. मुकर्जी कहते हैं, का जन्म 5 अक्टूबर 1894 को एक बंगाली मध्यवर्गीय परिवार में हुआ था। वे जाति से ब्राह्मण थे उनकी शिक्षा, दीक्षा कोलकाता में ही हुई थी। इतिहास उनका प्रिय विषय था। उन्होंने अर्थशास्त्र, इतिहास और राजनीतिशास्त्र में स्नातक उपाधि ली। 1920 में अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर उपाधि लेने के बाद वे इंग्लैण्ड चले गए और वहां अध्ययन प्रारम्भ किया, पर प्रथम विश्वयुद्ध होने के कारण उन्हें भारत लौटना पड़ा। मुकर्जी ने अपने शिक्षण कार्य को कोलकाता के बंगबासी महाविद्यालय से प्रारम्भ किया। बाद में नवस्थापित लखनऊ विश्वविद्यालय में 1922 में अर्थशास्त्र तथा समाजशास्त्र के व्याख्याता पद पर चले गये। यहां पर व 32 वर्ष रहे जो काफी लम्बा समय था। लखनऊ विश्वविद्यालय के पहले प्रोफेसर राधाकमल मुकर्जी ही डी.पी. मुकर्जी को लखनऊ में लाये थे। 1954 में डी.पी. मुकर्जी प्रोफेसर पद से सेवानिवृत्त हो गये उसके बाद वे हेग के इन्टरनेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज में विजिटिंग प्रोफेसर रहे। उसके बाद उन्होंने अलीगढ़ विश्वविद्यालय में भी अर्थशास्त्र के प्रोफेसर पद पर कार्य किया।

प्रतिभा के धनी डी.पी. मुकर्जी ने न केवल समाजशास्त्र बल्कि अर्थशास्त्र, साहित्य, संगीत, कला में भी अपना योगदान दिया, लेकिन उनके योगदान से समाजशास्त्र को अधिक लाभ मिला। मार्क्सवादी विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित हुए। इसीलिए वे अपने आप को मार्क्सवादी कहलाना अधिक पसंद करते थे। उन्होंने भारतीय समाज का विश्लेषण भी भौतिकवादी, मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्य से ही किया था।

डी.पी. मुकर्जी की प्रमुख कृतियाँ–

1. व्यक्तित्व और सामाजिक विज्ञान।
2. समाजशास्त्र की मूल अवधारणाएं
3. आधुनिक भारतीय संस्कृति।
4. भारतीय युवकों की समस्याएं।
5. टैगोर एक अध्ययन।
6. भारतीय संगीत का परिचय।
7. भारतीय इतिहास पर एक अध्ययन।
8. विचार एवं प्रतिविचार 1946
9. विविधताएं 1958

इन पुस्तकों के अतिरिक्त भी डी.पी. मुकर्जी ने कई लेख व उपन्यास भी लिखे हैं।

डी.पी. मुकर्जी का प्रमुख योगदान–

1. व्यक्तित्व।
2. आधुनिक भारतीय संस्कृति।
3. परम्पराएं।
4. समाजशास्त्र की प्रकृति तथा पद्धति।
5. नये मध्यम वर्ग की भूमिका।
6. भारतीय इतिहास की रचना।
7. आधुनिकीकरण।
8. संगीत।

परम्परा एवं सामाजिक परिवर्तन–

डी.पी. मुकर्जी ने भारतीय समाजशास्त्र पर अपने विचार रखे जो बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। इन्होंने भारतीय समाजशास्त्र की विषय–वस्तु तथा अध्ययन पद्धति पर विचार किया है। इनके अनुसार भारतीय समाजशास्त्र के अन्तर्गत भारतीय परम्पराओं का अध्ययन व विश्लेषण को शामिल करना चाहिए क्योंकि परम्पराएं ही भारतीय समाजशास्त्र की विषय–वस्तु है और इन परम्पराओं का अध्ययन उनकी ऐतिहासिकता से होना चाहिए। मुकर्जी ने इस बात पर बल दिया कि समाजशास्त्र को रूपान्तरण की प्रक्रिया का विश्लेषण करके अंतिम रूप में मार्ग प्रदर्शित करना चाहिए। उनका मानना था कि भारतीय संस्कृति का विकास अनेक प्रजातियों एवं संस्कृतियों की लगातार चुनौतियों एवं उन सबके संश्लेषण के परिणामस्वरूप हुआ है। मानव तथा समाज के हिन्दू सिद्धान्त की व्याख्या करने के विचार से उन्होंने बड़े उत्साह के साथ परम्पराओं के अध्ययन का समर्थन किया। ऐसा करते समय उन परिर्वतनों का भी अध्ययन सम्मिलित है जो परम्परा में आंतरिक और बाह्य दबाव से उत्पन्न हुए हैं।

डी.पी. मुकर्जी का मानना था कि भारतीय समाजशास्त्रियों के लिए यह अच्छी बात है कि भारतीय समाज दूसरे समाजों की तुलना में कम परिवर्तित हुआ है हालांकि उनमें परिवर्तन तकनीकी परिवर्तन हुआ है। मुकर्जी भारतीय समाज के अध्ययन हेतु मार्क्सवादी द्वन्द्वात्मक अध्ययन के प्रयोग के पक्ष में थे। उनका मानना था कि अनुसंधान की दृष्टि से भारतीय समाज के संदर्भ में समाज व संस्कृति को समझने के लिए मार्क्सवादी द्वन्द्वात्मक उपागम श्रेष्ठ है। इस पद्धति के द्वारा भारत की सामाजिक वास्तविकता, विशिष्ट परम्पराओं, विशिष्ट प्रतीकों, विशिष्ट सांस्कृतिक प्रतिमानों एवं सामाजिक क्रियाओं को समझा जा सकता है।

मुकर्जी ने पश्चिमी परम्परा के आदर्श पर भारत में

समाजशास्त्र को ढालने के विषय में संदेह व्यक्त किया है। उनके अनुसार भारत में समाजशास्त्र की आवश्यकताओं एवं सिद्धांतों के एक पुंज (गुच्छा) के रूप में विशिष्टता रखनी चाहिए और उनकी रचना इस प्रकार से हो कि उनकी विशिष्ट व्याख्या हो सके। उनका यह भी मानना था कि भारतीय समाज विभिन्नता युक्त है इसलिए इसकी व्याख्या किसी सामान्य सिद्धान्त से नहीं हो सकती है। उन्होंने इस बात का भी घोर विरोध किया कि हमें पश्चिमी दृष्टिकोण से भारतीय समाज को समझने की कोशिश नहीं करनी चाहिए।

मुकर्जी ने 1955 में भारतीय समाजशास्त्रीय संगोष्ठी के देहरादून अधिवेशन में अध्यक्षीय भाषण के दौरान ''भारतीय परम्परा एवं सामाजिक परिवर्तन'' विषय पर अपने विचार रखे। उन्होंने लिखा है ''अतः हमारा प्रथम कर्त्तव्य उन सामाजिक परम्पराओं का अध्ययन करना है जिनमें हमने जन्म लिया है और जिनमें हमने जीवन व्यतीत किया है। इस कर्त्तव्य में आंतरिक और बाह्य दबावों से परम्पराओं में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन भी सम्मिलित है। बाद में दबाव अधिकतर आर्थिक है। जब तक आर्थिक शक्ति असामान्य रूप से मजबूत नहीं होती और केवल इसी के द्वारा उत्पादन प्रणालियों में परिवर्तन होता है तब तक परम्पराएं सामंजस्य करके जीवित रहती है।'' उनका मत था कि भारतीय समाजशास्त्रियों के लिए एक समाजशास्त्री होना पर्याप्त नहीं है वरन् उसे पहले एक भारतीय होना चाहिए। अपनी समाज व्यवस्था को समझने के लिए उसे जनरीतियों, रूढ़ियों एवं प्रथाओं में भाग लेना चाहिए। उसे भारत की निम्न और उच्च विधाओं का ज्ञान होना चाहिए। उच्च विधाओं के लिए उन्हें संस्कृत की उच्च एवं निम्न विधाओं के लिए स्थानीय भाषाओं का ज्ञान होना आवश्यक है।

परम्परा का अर्थ–

परम्परा जिसे अंग्रजी में Tradition कहते हैं। Tradition शब्द की उत्पत्ति Tradere शब्द से हुई है जिसका तात्पर्य है 'हस्तान्तरण करना'। अंग्रेजी के Tradition का संस्कृत भाषा में समानार्थक शब्द परम्परा है जिसका अर्थ है उत्तराधिकार। अर्थात् परम्परा का शाब्दिक अर्थ है समाज की प्रथाओं, रूढ़ियों, रीति–रिवाजों को अगली पीढ़ी को हस्तान्तरित करना। भारतीय समाज की प्राचीन परम्पराएं आज भी अस्तित्व में है हालांकि वे मौलिक रूप में नहीं है क्योंकि इतने समय बीत जाने के कारण उन परम्पराओं में बदलाव आया है। इस बदलाव का मुख्य कारण यह भी रहा है कि भारतीय समाज विभिन्न समाजों व संस्कृतियों के सम्पर्क में आया उस कारण भी भारतीय समाज की परम्पराओं में बदलाव आया है जैसे– मुगल व ब्रिटिश समाज मुख्य है।

परम्पराओं में परिवर्तन के सिद्धान्त

मुकर्जी ने भारतीय परम्पराओं में परिवर्तन के तीन सिद्धान्त बताए हैं– श्रुति, स्मृति और अनुभव। मुकर्जी का मानना था कि उच्च परम्पराएं मुख्य रूप से बौद्धिक थी जो श्रुतियों और स्मृतियों में केन्द्रित थी जिनमें वाद–विवाद, तर्क बुद्धि विचार के कारण परिवर्तन होता था। अर्थात् जो परम्पराएं श्रुति और स्मृति से निर्मित होती थी उनमें परिवर्तन बौद्धिकता के आधार पर होता था। अनुभव एक क्रान्तिकारी सिद्धान्त हैं। व्यक्तिगत अनुभव परिवर्तन का मूल कारण रहा, किन्तु वह शीघ्र ही सामूहिक अनुभव का रूप ग्रहण कर लेता है। मध्य युग से आधुनिक युग का सम्पूर्ण इतिहास अनुभव पर आधारित रहा है। यदि हम विभिन्न सम्प्रदायों और धार्मिक ग्रन्थों की उत्पत्ति ज्ञात करें तो यह पाएंगे कि उनका प्रारम्भ उनके जन्मदाता संतों के व्यक्तिगत अनुभव के कारण हुआ और बाद में वे सामूहिक अनुभव के रूप में फैल गऐ।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मुकर्जी ने श्रुति, स्मृति और अनुभव के आधार पर भारतीय समाज की परम्पराओं में परिवर्तन को दर्शाने का प्रयास किया है। इस सिद्धान्त से मुकर्जी ने यह स्थापित किया कि वर्तमान का अध्ययन अतीत के संदर्भ में ही हो सकता है। अतः आधुनिकीकरण को समझने से पूर्व परम्परा को समझना आवश्यक है। वे कहते हैं कि ''परम्पराएं कभी मरती नहीं है वरन् नवीन परिस्थितियों के साथ वे सामंजस्य एवं अनुकूलन कर लेती है। केवल तीव्र आर्थिक परिवर्तन ही परम्पराओं को नष्ट कर सकते हैं।''

आधुनिकीकरण के बारे में मुकर्जी लिखते हैं कि यह एक गतिशील तथ्य है, एक ऐतिहासिक प्रकिया है। परम्परा के अभाव में आधुनिकीकरण का कोई अर्थ नहीं है। यह सापेक्ष अवधारणा है और परम्परा से सम्बन्धित है उससे पृथक् और उसके विरूद्ध नहीं। परम्परा और आधुनिकता के अन्तर्खेल (Inter Play) से परम्परागत मूल्यों और सांस्कृतिक प्रतिमानों में जो फैलाव और मिश्रण होता है, वही आधुनिकीकरण है। परम्परा कोई स्थिर अवधारणा नहीं है वरन् एक गतिशील है। परम्परा आधुनिकता में बाधक तत्व नहीं वरन् उसे प्रेरित करने वाली दशा है।

परम्पराओं का द्वन्द्व–

डी.पी. मुकर्जी द्वन्द्वात्मक उपागम के समर्थक थे। द्वन्द्वात्मक उपागम यह मानता है कि किसी समाज का विकास द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया से होता है। प्रत्येक समाज में दो विरोधी शक्तियाँ अस्तित्व में रहती है, इनमें परस्पर संघर्ष होता है। इस संघर्ष का अंत एक नये समाज के रूप में होता है जो दोनों विरोधी शक्तियों का समन्वय होता है। मार्क्स इसे वाद–प्रतिवाद–संवाद के रूप में व्यक्त करता हैं। इसे त्रेत का नियम कहते हैं। किसी भी विषय का प्रारम्भ 'वाद' से होता है जो स्वयं विराधाभासों को जन्म देता है अर्थात् समाज में एक शक्ति मौजूद है तो दूसरी इसके विपरीत शक्ति भी होती है जिसे 'प्रतिवाद' कहते हैं। इन दोनों शक्तियों में संघर्ष होता रहता है। यह संघर्ष नई स्थिति को जन्म देता है जिसमें वाद और प्रतिवाद का समन्वय होता है। इस स्थिति को 'संवाद'

कहते हैं। संवाद कुछ समय के बाद वाद बनता है उसका प्रतिवाद उत्पन्न होता है फिर उन दोनों में संघर्ष होता है तथा पुनः उन दोनों में समन्वय होता है और एक नया संवाद स्थापित होता है। इस प्रकार समाज में विभिन्न परम्पराओं, प्रथाओं, रीति–रिवाजों आदि में भी वाद–प्रतिवाद संवाद की स्थिति होते हुए हर बार नवीन वाद स्थापित होता है इस प्रक्रिया से समाज विकास करता रहता है।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि डी.पी.मुकर्जी ने भारतीय समाज व उसके विकास को समझने के लिए परम्पराओं को महत्वपूर्ण माना है। उनके अनुसार इन परम्पराओं में श्रुति, स्मृति व अनुभव के कारण परिवर्तन होता है। साथ ही परिवर्तन के लिए परम्पराओं के मध्य होने वाला द्वन्द्व भी जिम्मेदार है।

ए.आर. देसाई (1915–1994)

अक्षय कुमार रमनलाल देसाई का जन्म 16 अप्रेल 1915 में गुजरात में नाड़ियाद कस्बे में हुआ था। यह कस्बा अहमदाबाद और वड़ोदरा के बीच स्थित था। वे जाति से नागर बाह्मण थे। इस जाति को गुजरात में समझदार जाति माना जाना था। देसाई के पिता रमनलाल वसन्तलाल देसाई उच्च कोटि के साहित्यकार थे। उनके उपन्यासों ने युवा पीढ़ी को ग्रामीण विकास कार्यों के लिए उत्साहित किया। रमनलाल जब वड़ोदरा में अधिकारी थे, उन्हें सहकारी कार्य के लिए राज्य में दौरे करने होते थे इसका लाभ उनके पुत्र अक्षय को भी मिला। दौरों के दौरान उन्होंने आम आदमी की दिक्कतों को निकटता से देखा।

देसाई ने फेबियन समाजवाद को अपने पिता से सीखा था। वड़ोदरा में उन्होंने विद्यार्थी आन्दोलनों में बड़ी सक्रियता से भाग लिया था। यहाँ उन्होंने अपनी स्कूली शिक्षा प्राप्त कर वड़ोदरा विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया लेकिन विद्यार्थी आन्दोलनों में सक्रिय होने के कारण उन्हें वड़ोदरा विश्वविद्यालय से निष्कासित कर दिया गया था। उन्होंने स्नातक की परीक्षा पास करने के उपरान्त कानून की डिग्री प्राप्त की। सन् 1946 में उन्होंने घुर्ये के मार्गदर्शन में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त कर ली। मुम्बई विश्वविद्यालय में ही उन्होंने प्राध्यापक का कार्य आरम्भ किया। इसके बाद 1951 में वे मुम्बई विश्वविद्यालय में इसी पद पर नियुक्त हुए। आगे चलकर इसी विभाग के प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष बने। यहां से सेवानिवृत्त होने के बाद आई.सी.एस.एस.आर. (इंडियन काउंसिल ऑफ सोशल साईन्स एण्ड रिसर्च) ने उन्हें नेशनल फेलो के पद पर नियुक्त किया गया। 12 नवम्बर 1994 को इनका निधन वड़ोदरा में हुआ।

ए.आर.देसाई की कृतियाँ

1. सोशयल बैकग्राउण्ड ऑफ इंडियन नेशनलिज्म 1946
2. रिसेन्ट ट्रेन्ड्स इन इंडियन नेशनलिज्म 1960
3. रूरल सोश्लोजी इन इंडियन 1969
4. स्लम्स एण्ड अरबेनाइजेशन (डि.पिल्लई के साथ)1970
5. स्टेट एण्ड सोसाइटी इन इंडिया 1975
6. पीजेन्ट् स्ट्रगल इन इंडिया 1979
7. इंडियाज पाथ ऑफ डेवलपमेंट 1984
8. अग्रेरियन स्ट्रगल्स इन इंडिया आफ्टर इंडिपेन्डेंस 1986

ए.आर.देसाई का योगदान

1. भारत में ग्राम।
2. भारतीय समाज का रूपान्तरण।
3. भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि।
4. किसान संघर्ष
5. राज्य और समाज
6. गंदी बस्तियाँ और नगरीकरण
7. राष्ट्रीय आन्दोलन

राज्य–

ए.आर. देसाई ने राज्य की अवधारणा पर चर्चा अपनी पुस्तक 'भारतीय समाज में राज्य व समाज' जिसका प्रकाशन 1975 में हुआ था, में किया। देसाई मार्क्सवादी उपागम ऐतिहासिक द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद से प्रभावित थे इसलिए उन्होंने राज्य को भी इसी उपागम से समझने का प्रयास किया उनका मानना था कि भारतीय समाज को पूँजीवादी बनाने का उत्तरदायित्व ब्रिटिश उपनिवेशवाद का है। आजादी के बाद भी देश को औद्योगिक बनाने के लिए राज्य ने पूँजीपतियों को पूरा प्रोत्साहन दिया।

वे यह स्वीकार करते हैं कि भारतीय राज्य कई दृष्टियों से 'पूँजीवादी राज्य' है। यह स्वयं तो सर्वहारा का शोषण करता ही है, साथ ही पूँजीपतियों के हितों की रक्षा करने में अग्रणी है। राज्य और बुर्जूआ (पूँजीपतियों) वर्ग दोनों की साजिश है कि सर्वहारा (श्रमिक) वर्ग की हालत में कोई सुधार न हो पाए। गाँवों में जो परिवर्तन का दौर चला रखा है वह केवल प्रभुत्व वर्गों के लिए ही है। इससे राज्य और बुर्जूआ वर्ग अधिक शक्तिशाली हो रहे हैं। राष्ट्रवाद के अपने अध्ययन में देसाई ने ग्रामीण सामाजिक संरचना भारत में परिवर्तन की सामाजिक तथा आर्थिक नीतियों तथा राज्य और समाज की संरचना का विश्लेषण किया।

राज्य भी एक वर्ग है

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी राज्य एक पूँजीपति वर्ग की तरह काम कर रहा है। वह पूँजीपतियों का हमदर्द है और उसकी प्रकृति एक वर्ग की प्रकृति की तरह है। वर्ग पूँजीपति है,सामंत है और कभी–कभी वह समाजवादी दिखाई देता है। देसाई अपनी पुस्तकों में बार–बार इस तथ्य को दोहराते हैं कि ब्रिटिश उपनिवेशवाद में राज्य पूँजीवादी था और स्वतंत्र भारत में भी यह बराबर पूँजीवादी रहा है। इस अवधि में इसने अपने पूँजीपतियों के साथ तालमेल बैठाकर अपने लक्ष्य की पूर्ति की है। इस तरह भारत में उत्पादन प्रक्रिया में राज्य का बहुत बड़ा हिस्सा है। देसाई के इस कथन से कई मार्क्सवादी और गैर–मार्क्सवादी विद्वान असहमत हैं। मार्क्सवादियों का कहना है कि उत्पादन के इस विवाद में राज्य तटस्थ हैं। राज्य पूँजीवाद को लेकर अपनी एक निजी नीति रखते हैं। ये विद्वान राज्य को या तो आधुनिक या परम्परागत मानकर छोड़ देते हैं। गैर–मार्क्सवादियों का मानना है कि राज्य पूँजीवादी वर्ग की तरह है।

रजनी कोठारी जो उदारवादी राजनीति के विद्वान रहे हैं, जो गैर–मार्क्सवादी है कहते हैं कि भारतीय राज्य एक पूँजीवादी राज्य नहीं है। लेकिन इस राज्य की पूँजीवाद के विकास में बहुत बड़ी भूमिका रही है। भारत में देखा जाए तो राज्य और पूँजीवाद का सम्बन्ध परस्पर विरोधी रहा है। इस तरह ए.आर. देसाई की मान्यता के ठीक विपरीत, रजनी कोठारी ने यह स्थापित किया कि प्रारम्भ में भारतीय राज्य पूँजीपति की गिरफ्त से दूर थे। राज्य का लक्ष्य समाज में समानता लाने का रहा है।

कोठारी का मानना था कि आपात स्थिति के बाद राज्य की प्रकृति बदल गई क्योंकि पूँजीपति वर्ग बहुत विस्तृत हो गया है। अब राज्य हाशिये पर आ गया है। ऐसी स्थिति में भारत में राज्य की प्रकृति को पूँजीवादी कहते हैं। ए.आर. देसाई की दृष्टि में राज्य पिछड़े वर्गों का शोषण करता है। संविधान ने लोगों को जो मौलिक अधिकार दे रखे हैं, लोग उनका उपयोग नहीं कर पाते हैं। राज्य कई विधियों द्वारा हिंसा के माध्यम से लोगो को अपने नियंत्रण में लाता है और उन पर दबाव डालता है। ए.आर. देसाई का मानना है कि भारत में राज्य की इस पूँजीवादी सोच के कारण ही गंदी बस्तियों, आर्थिक असमानता, किसान संघर्ष आदि को बढ़ावा मिला है। जिस कारण भारत विकास के पथ पर आगे नहीं बढ़ सका अर्थात् देसाई ने भी भारतीय समाज में राज्य की अवधारणा का विश्लेषण मार्क्सवादी उपागम से ही किया तथा यह स्थापित करने का प्रयास किया कि राज्य पूँजीपतियों के अधीन रहकर ही समाज के अन्य वर्गों का शोषण करता है।

एम.एन श्रीनिवास (1916–1999)

मैसूर नरसिम्हाचार श्रीनिवास का जन्म 16 नवम्बर 1916 मैसूर के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनकी दीक्षा ब्राह्मण परम्पराओं–ब्राह्मणत्व के प्रशिक्षण में हुई थी। उन्होंने घुर्ये के सान्निध्य में एम.ए. किया। उन्होंने एम.ए. के शोध प्रबंध में "मैसूर में विवाह और परिवार" को अपने अध्ययन का विषय बनाया। इस शोध में श्रीनिवास ने कन्नड़ भाषा बोलने वाली जातियों के विवाह और परिवार की जानकारी दी है। उन्होंने मुम्बई विश्वविद्यालय में ही "दक्षिण भारत के कुर्ग लोगों" के विषय पर डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। इसी विषय पर आपने अपनी पुस्तक–रिलिजन एण्ड सोसाइटी अमांग दि कुर्ग ऑफ साउथ इंडिया–का प्रकाशन 1952 में करवाया। यह पुस्तक काफी लोकप्रिय हुई। इस पुस्तक के कारण ही आपको ब्रिटेन जाने का अवसर प्राप्त हुआ। जहां जाकर उन्हें ब्रिटिश अकादमी की फेलोशिप मिल गई। उन्होंने ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से डी.फिल की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने ऑक्सफोर्ड से आने के बाद वड़ोदरा विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र विभाग की स्थापना की। इसके बाद उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय में भी समाजशास्त्र विभाग की स्थापना का प्रयास किया। बाद में उन्होंने बैंगलौर के इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल एण्ड इकोनोमिक चेंज में काम करना प्रारम्भ किया। उनको प्रोफेसर रहना पसन्द था। और वे वहीं पर इस पद पर रहे। यहीं पर 30 नवम्बर 1999 को उनका निधन हो गया। उन्होंने भारतीय समाजशास्त्र में वृहत समाजशास्त्रीय स्पष्टीकरणों, सूक्ष्म मानवशास्त्रीय अन्तर्दृष्टियों, समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य तथा मानवशास्त्रीय अन्तर्दृष्टियों की लघु स्तर के समुदायों को समझने के लिए सैद्धान्तिक तथा पद्धतिशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य का प्रयोग किया।

एम.एन. श्रीनिवास की कृतियां–

1. मैसूर में विवाह और परिवार 1942
2. दक्षिण भारत के कुर्ग में धर्म व समाज 1952
3. भारतीय गांव 1955
4. आधुनिक भारत में जाति और अन्य लेख 1962
5. आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन 1966
6. दि रिमेम्बर्ड विलेज 1976
7. भारत : सामाजिक संरचना 1980
8. प्रभु जाति और अन्य लेख 1987
9. दि कोहिजिवे रोल ऑफ संस्कृताईजेशन 1989

10. ऑन लिविंग इन ए रिवोल्यूशन एण्ड अदर ऐसेज 1972
11. विलेज, कास्ट, जेन्डर एण्ड मेथड़ 1996
12. इण्डियन सोसायटी थ्रू पसर्नल राइटिंग्ज 1996

एम. एन. श्रीनिवास का योगदान–

1. सामाजिक परिवर्तन : संस्कृतिकरण, पश्चिमीकरण, ब्राह्मणीकरण
2. धर्म और समाज
3. गांव
4. जाति
5. प्रभु जाति
6. आधुनिक भारत
7. विवाह और परिवार

8. भारतीय सामाजिक संरचना–

गांव– श्रीनिवास के अध्ययन का मुख्य केन्द्र भारतीय गांव था। गांव के अध्ययन की प्रेरणा श्रीनिवास को 1945–46 में रैडक्लिफ ब्राउन से मिली थी। उनकी पुस्तक रिमेम्बर्ड विलेज में आपने कर्नाटक में गांव रामपुरा के बारे में विस्तृत चर्चा की थी। इस पुस्तक की एक बड़ी रोचक कहानी है जब 1970 में श्रीनिवास ने कर्नाटक के गांव रामपुरा का अध्ययन कर वहां के तथ्यों के दस्तावेजों को पिट्सबर्ग विश्वविद्यालय में जमा करवाया उसी दौरान एक दुर्घटना के कारण वे सभी दस्तावेज जलकर राख हो गये थे। इस घटना से श्रीनिवास मायूस हो गये। उनके मित्र सोलटोक्स ने उन्हें हिम्मत दी और उन्हें इस बात के लिए प्रेरित किया कि वे अपने स्मरण के आधार पर उस गांव के बारे में लिखे। इस प्रेरणा से प्रेरित होकर ही ''रिमेम्बर्ड विलेज'' (स्मरण रखा गया गांव) नामक पुस्तक का प्रकाशन 1976 में करवाया। समाजशास्त्र ने रिमेम्बर्ड विलेज को एक शास्त्रीय ग्रन्थ माना है। यह पुस्तक पूर्ण रूप से क्षेत्रीय कार्य के आधार पर लिखी हुई थी। इस पुस्तक के कुल ग्यारह अध्याय हैं।

पहले अध्याय में उन्होंने बताया है कि इस पुस्तक को लिखने का विचार उनके मस्तिष्क में कैसे आया। गांव का चयन किसी तर्क विधि द्वारा नहीं किया गया। वास्तव में वे रामपुरा गांव से भावनात्मक रूप से जुड़े थे। इसीलिए इनका मन इस गांव का अध्ययन के लिए हुआ।

पुस्तक के दूसरे अध्याय में आपने रामपुरा गांव का परिचय दिया है साथ ही गांव के लोगों के साथ किस प्रकार सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करके तथ्यों को संग्रहित किया। इसका ब्यौरा इस अध्याय में है। इस अध्याय में श्रीनिवास ने गांव की आर्थिक स्थिति विशेष रूप से किसानों की आर्थिक स्थिति का विवरण दिया है।

पुस्तक के तीसरे अध्याय में श्रीनिवास ने गांव की सामाजिक संरचना के बारे में चर्चा की है। इसमें आपने यह स्थापित करने का प्रयास किया कि गांव की सामाजिक संरचना आर्थिक व्यवस्था से संचालित होती है।

चौथे अध्याय में गांव की कृषि के बारे में बताते हैं क्योंकि कृषि ही इस गांव के अधिकतर लोगों का मुख्य व्यवसाय है अर्थात् गांव के लोगों की आजीविका का मुख्य साधन कृषि के इर्द–गिर्द ही घुमता है।

पाँचवें अध्याय में गांव में परिवार व्यवस्था के बारे में बताते हैं कि किस प्रकार परिवार व्यवस्था संचालित होती है पुरुष और स्त्री किस भाँति अपने काम का बंटवारा करते हैं। पुरुष घर के बाहर कार्य तथा स्त्री घर के अन्दर का कार्य करती है।

छठा अध्याय श्रीनिवास की पुस्तक का केन्द्रीय अध्याय है। इस अध्याय में आप जाति व्यवस्था का विश्लेषण करते हैं। इन्होंने यह स्थापित किया कि विभिन्न जातियां जजमानी व्यवस्था के कारण एक दूसरे पर निर्भर रहती है। एक जाति का दूसरी जाति से किस प्रकार के सम्बन्ध है।

सातवे अध्याय में इन्होंने जातियों के बीच गुटबाजी के बारे में चर्चा की तथा यह स्थापित किया कि किस जातियों के मध्य संघर्ष होता है।

आठवें अध्याय में श्रीनिवास ने रामपुरा में यांत्रिक परिवर्तन के दौर के प्रभाव का अध्ययन किया। यांत्रिक परिवर्तन के कारण कृषि व्यवसाय में ट्रेक्टर, सिंचाई पम्पों व अन्य प्रकार के उपकरणों का प्रयोग हुआ जिससे किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ।

नौवें अध्याय में रामपुरा की सामाजिक स्तरीकरण व्यवस्था को बताते हैं मित्रता का वर्णन करते हैं, लोगों के आपसी झगड़ों, अफवाहों और चौपाल पर होने वाली गप्पों का मजा लेते हैं।

दसवें अध्याय में श्रीनिवास गांव में धर्म की चर्चा करते हैं। उन्होंने वैदिक धर्म का उल्लेख नहीं किया वरन् लोग दिन–प्रतिदिन के व्यवहार में कैसे पूजा–उपासना, कौनसी देवी–देवताओं की आरती करते हैं।

अपनी पुस्तक के अन्तिम अध्याय में वे यह बताते हैं कि उस गांव को जब उन्होंने छोड़ा तो किस प्रकार भावनात्मक रूप से गांव से जुडे थे। किस प्रकार उनको गांव वालों ने विदाई दी थी।

इस पुस्तक में आपने गांव को भारतीय समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में स्थापित किया। उनकी मान्यता थी कि यदि हमें भारतीय समाज को समझना है तो हमें भारतीय गांव के अध्ययन पर ही अधिक बल देना होगा तभी हम भारतीय समाज को उसकी पूर्णता के रूप में समझ सकते हैं। उनका मानना था कि तकनीकी प्रगति के कारण गांवों में भी सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक व आर्थिक परिवर्तन हो रहे हैं। इन परिवर्तनों के कारण गांवों की जाति व्यवस्था, परिवार व्यवस्था तथा विवाह रूपी संस्थाओं में तो परिवर्तन हो ही रहा है व्यक्ति के व्यक्ति से सम्बन्धों में भी परिवर्तन हो रहा है।

आर. के मुकर्जी (1889–1968)

राधाकमल मुकर्जी का जन्म 7 सितम्बर 1889 को बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले के बरहामपुर में बंगाली ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बरहामपुर पश्चिम बंगाल में ग्रामीण परिवेश का एक कस्बा था। उनके पिता नामी वकील थे। साथ ही वे बड़े विद्वान भी थे जिनकी रुचि इतिहास में थी। मुकर्जी की प्रारम्भिक शिक्षा बरहामपुर में हुई। वे बरहामपुर के कृष्णनाथ महाविद्यालय के बी.ए. के छात्र रहे। बाद में उन्होंने प्रेजीडेन्सी महाविद्यालय कोलकाता से इतिहास तथा अंग्रेजी साहित्य में आनर्स किया। यहीं पर इनका सम्पर्क एच.एम. पेरीवाल, अरविन्द घोष के भाई एम. घोष और भाषाविद हरिनाथ डे जैसे विद्वानों से हुआ। इन विद्वानों का मुकर्जी पर बहुत प्रभाव पड़ा। 1910 में बरहामपुर महाविद्यालय में अर्थशास्त्र के शिक्षक बने यहीं पर इन्होंने ''फाउण्डेशन ऑफ इण्डियन इकोनोमी'' पुस्तक लिखी। 1917 से 1921 तक कोलकाता विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र तथा राजनीतिशास्त्र विषयों को पढ़ाया। यहीं पर इन्होंने ''ग्रामीण समुदाय में सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन'' पर डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की।

वर्ष 1921 में मुकर्जी लखनऊ विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र व समाजशास्त्र विभाग में अध्यक्ष पद पर नियुक्त किये गये। यहां इन्होंने लम्बे समय तक अर्थशास्त्र व समाजशास्त्र विभाग में कई शोध कार्य करवाये तथा लगभग 30 वर्ष तक यहां अपनी सेवाएँ दी। 1945 से 1947 तक वे ग्वालियर राज्य के आर्थिक सलाहकार रहे। 1955 से 1957 तक ये लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति रहे। 1958 में वे लखनऊ विश्वविद्यालय के इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशयोलॉजी एण्ड ह्यूमन रिलेशन्स के निदेशक रहे। यहां इस पद पर कार्य करते हुए अगस्त 1968 में इनका निधन हो गया।

राधाकमल मुकर्जी की कृतियां–

1. दी फाउण्डेशन ऑफ इण्डियन इकॉनोमिक्स 1916
2. दी रूरल इकॉनोमी ऑफ इण्डिया 1926
3. रिजनल सोशयोलॉजी 1926
4. दी लेण्ड प्रोबल्म ऑफ इण्डिया 1927
5. इन्ट्रोडेक्शन ऑफ सोशयल साईकोलॉजी 1928
6. फील्ड एण्ड फारमर ऑफ ओउध 1929
7. दी थ्री वेस : दी वेस ऑफ ट्राससेंडालिस्ट रिलिजन एज ए सोशयल नार्म 1929
8. सोशयोलॉजी ऑफ मैसटीसीजल 1931
9. रिजनल बैलेन्स ऑफ मेन 1938
10. मेन एण्ड हीस हेबेटेशन 1940
11. इण्डियन वार्किंग क्लास 1945
12. दी सोशयल स्ट्रक्चर ऑफ वेल्यूस 1949
13. इन्टर कास्ट टेंशन 1951
14. ए जनरल थ्योरी ऑफ सोसायटी 1956
15. दी फिलोसॉफी ऑफ सोशयल साईन्स 1960
16. सोशयल प्रोफाईल ऑफ ए मैटोपॉलिस 1963
17. दी डाईमेन्शनस ऑफ ह्यूमन वेल्यूस 1964
18. दी डेसटीनी ऑफ सिविलाईजेशन 1964
19. दी वेस ऑफ ह्यूमेनीजम : ईस्ट एण्ड वेस्ट 1968

मुकर्जी का समाजशास्त्रीय योगदान–

1. भारतीय संस्कृति
2. समाज का सिद्धान्त
3. सार्वभौमिक सभ्यता का सिद्धान्त
4. आर्थिक क्रियाकलाप और सामाजिक व्यवहार
5. व्यक्तित्व, समाज और मूल्य
6. समुदायों का समुदाय
7. नगरीय सामाजिक समस्या
8. सामाजिक परिस्थितिकी

सामाजिक मूल्य–

डॉ. राधाकमल मुकर्जी सामाजिक मूल्य के विचार अपनी पुस्तकों The Structure of Social Values तथा Dimenisions of Human Values में व्यक्त किये। समाजशास्त्र में मूल्यों की अवधारणा के कारण ही मुकर्जी का नाम देश व विदेशों में विख्यात हुआ। इन्होंने अपनी पुस्तकों में मूल्यों की उत्पत्ति एवं उद्विकास, मूल्यों के मनोवैज्ञानिक नियमों, मूल्यों की सुरक्षा तथा मूल्यों के विभिन्न आयामों का उल्लेख किया है जिसके अन्तर्गत आपने जीव विज्ञान, मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र तथा तत्व मीमांसा आदि में पायी जाने वाली मूल्यों की व्याख्या प्रस्तुत की है। मुकर्जी ने मूल्यों को समझने के लिए एक अन्तः वैज्ञानिक उपागम का समर्थन किया। इनका मत है कि जब तक मूल्यों के बारे में कोई सार्वभौमिक सामान्य विचारधारा स्थापित नहीं कर ली जाती तब तक मानव समाज की वास्तविक प्रगति सम्भव नहीं है।

डॉ. मुकर्जी के योगदान के कारण ही भारत में मूल्यों का अध्ययन करने के लिए समाजशास्त्र की एक शाखा के रूप में ''मूल्यों का समाजशास्त्र'' का विकास हुआ। इसके अन्तर्गत मूल्यों व समाज का अध्ययन किया जाता है। मुकर्जी का मानना था कि विश्व के प्रत्येक समाज के अपने कुछ आदर्श होते हैं और उन्हीं आदर्शों के आधार पर समाज की प्रगति का मूल्यांकन किया जाता है।

अर्थ एवं परिभाषा–

मुकर्जी मूल्यों के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि मूल्य मानव समूहों और व्यक्तियों के द्वारा प्राकृतिक व

सामाजिक संसार से तालमेल करने के साधन है। मूल्य ऐसे प्रतिमानों को कहते हैं जो व्यक्तियों की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु दिशा–निर्देश करते हैं। मूल्यों को सामाजिक अस्तित्व का केन्द्रीय तत्व भी कहा जाता है क्योंकि मूल्य है तो समाज है समाज है तो व्यक्ति। इसीलिए व्यक्ति इनकी रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहता है। मूल्य एक प्रकार से सामूहिक लक्ष्य होते हैं जिनके प्रति सदस्यों की स्वाभाविक आस्था होती है। वे मूल्यों को 'समाज द्वारा स्वीकृति प्राप्त आकांक्षाएँ और लक्ष्य' मानते हैं।

मुकर्जी मूल्यों को परिभाषित करते हुए लिखते हैं 'मूल्य समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इच्छाएं तथा लक्ष्य है जिनका आन्तरीकरण सीखने या समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता है और जो प्राकृतिक अधिमान्यताएं मानक तथा अभिलाषाएं बन जाते हैं।'

सामाजिक मूल्यों की विशेषताएं–

मुकर्जी ने मूल्यों की जो परिभाषा दी है उसी के आधार पर मूल्यों की निम्न विशेषताएं है–

1. सामाजिक मूल्य सामूहिक होते हैं।
2. सामाजिक मूल्य सामाजिक मापक होते हैं।
3. सामाजिक मूल्यों के बारे में एकमतता पायी जाती है।
4. सामाजिक मूल्यों के पीछे भावनाएं होती हैं।
5. सामाजिक मूल्य गतिशील होते हैं।
6. सामाजिक मूल्यों में विभिन्नता पायी जाती है।
7. सामाजिक मूल्य सामाजिक कल्याण एवं सामाजिक आवश्यकताओं के लिए महत्वपूर्ण माने जाते हैं।
8. सामाजिक मूल्य सार्वभौमिक होते हैं।

मूल्यों का उद्भव–

मुकर्जी का मानना था कि सभी मूल्य की प्रकृति सामाजिक होती है इसीलिए मूल्यों की उत्पत्ति एक सामाजिक संरचना विशेष के सदस्यों के बीच होने वाली अन्तःक्रियाओं के परिणाम स्वरूप धीरे–धीरे होती है। मानव को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्यावरण से सन्तुलन बनाये रखना आवश्यक होता है। साथ ऐसा करते समय उसे जीवन निर्वाह के लिए अनेक समस्याओं का सामना करना पडता है। इसी दौरान उसे अनेक सामाजिक अनुभव भी होते हैं जो कि सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करते हैं। सामाजिक व्यवस्था का निर्माण सामाजिक मूल्यों पर निर्भर करता है। मुकर्जी कहते हैं कि मूल्यों की उत्पति और विकास सामूहिक सम्बन्धों की सरंचना में होता है। अतः जब भी संस्कृति में परिवर्तन होता है तब नये मूल्यों का जन्म होता है। वे लिखते हैं कि मानव मूल्यों की खोज करने वाला एवं मूल्यों का निर्माण करने वाला 'प्राणी' हैं।

मुकर्जी का मत है कि सामूहिक परिस्थितियां मूल्यों की उत्पत्ति में सहायक होती है। मानव सामाजिक जीवन में सक्रिय होता है तो उसके मन में आदर्शों एवं नैतिक तथ्यों के प्रति अधिक चेतना होती है। अतः सामूहिक अन्तःक्रिया के परिणाम स्वरूप जिन अनुभवों के आधार पर सामाजिक जीवन से जुडी अनेक चीजों का विकास होता है उनके आधार पर समूह में मूल्यों का निर्माण होता है। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर मुकर्जी ने मूल्यों के उद्भव के तीन आधार बताये हैं–

1 लक्ष्य।
2 आदर्श।
3 मान्यताएं।

प्रत्येक व्यक्ति का अपना जीवन व्यतीत करने का लक्ष्य होता है लेकिन जीवन व्यतीत करने के लिए उसे मूल्यों का निर्माण करना होता है। इसी प्रकार जब वह मूल्यों को स्वीकार करता है तो वह मूल्य उसके लिए आदर्श बन जाते हैं और वह उसी के अनुरूप व्यवहार करता है। आदर्शों की स्थापना के बाद मूल्य सामूहिक मान्यताओं का रूप लेते हैं।

मूल्यों का सोपान या स्तर–

मुकर्जी का मत था कि सभी मूल्य समान स्तर के नहीं होते हैं वरन् उनमें एक स्तर देखने को मिलता है। मूल्यों का यह स्तर सामाजिक संगठन के स्तरों पर निर्भर करता है। मुकर्जी ने चार प्रकार के सामाजिक संगठनों के स्तर का वर्णन किया है–

1. भीड़–

भीड़ सामाजिक संगठन की पहली अवस्था है। यह अस्थायी समूह है जो आदिम प्रकार के सम्बन्धों तथा व्यवहारों को दर्शाती है। भीड़ में विवेक की उपेक्षा भावनाओं का आधिपत्य होता है इसमें नैतिकता का अभाव होता है और अनुकरण की प्रवृत्ति अधिक होती है। अर्थात् भीड़ भेड़ चाल पर निर्भर करती है। इस स्तर में सामाजिक मूल्य, मानदण्डों एवं आदर्शों का पूर्णतः अभाव पाया जाता है।

2. स्वार्थ समूह–

सामाजिक संगठन का दूसरा स्तर स्वार्थ समूह होता है इसका निर्माण कुछ विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए होता है इस कारण इसमें लोगों में मिल जुलकर कार्य करने की प्रवृत्ति विकसित होती है। जैसे श्रमिक संघ, व्यापार संघ, राजनीतिक दल, क्लब आदि इस प्रकार संगठन के अपने ही विशेष मूल्य होते हैं।

3. समाज या समुदाय–

यह सामाजिक संगठन का विस्तृत, तार्किक एवं नैतिक आधारों पर निर्मित होता है। समाज में व्यक्ति अन्य सदस्यों के हितों को ध्यान में रखकर सहयोगी व्यवहार करता है। इस प्रकार के संगठन में समानता और न्याय के मूल्य अधिक व्यक्त होते हैं और उन्हें स्वीकार भी किया जाता है।

4. सामूहिकता–

मानव संगठन का सर्वोत्तम संगठन सामूहिकता है। यह सामाजिक संगठन का सुदृढ़ और सार्वभौमिक रूप है जो उच्च

चेतन, अनुशासन, बौद्धिकता, विवेक एवं नैतिकता का परिणाम होता हैं इसमें मनुष्य सार्वभौमिक सामाजिक मूल्यों जैसे प्रेम, समानता, बन्धुत्व, सहयोग, सामाजिक उत्तरदायित्व आदि को स्वीकार करता है। इसमें लोगों में विश्व बन्धुत्व की भावना का विकास होता है।

मूल्यों के नियम–

मुकर्जी ने सामाजिक मूल्यों के निम्न नियम बताये हैं–

1. समाज में नियन्त्रण एवं समर्थन के कारण मानवीय प्रेरणाएं मूल्यों में परिवर्तित हो जाती है।
2. मौलिक मूल्यों की संतुष्टि हो जाने पर मानव में उन मूल्यों के प्रति उदासीनता पैदा हो जाती है। ऐसी स्थिति में समाज एवं संस्कृति में नवीन इच्छाएं, साधन एवं लक्ष्य ढूंढ़े जाते हैं जो नवीन मूल्यों को जन्म देते हैं।
3. मूल्यों के परस्पर अन्तःक्रिया के कारण वे परस्पर आपस में घुल–मिलकर अनेक प्रकार के सम्मिलन "Combinations" को उत्पन्न करते हैं।
4. कई मूल्यों में प्रस्पिर्धा के कारण उनमें संस्तरण (स्तर) उत्पन्न होता है।
5. मूल्यों में संघर्ष होने पर व्यक्ति अपने आदर्शों के आधार पर श्रेष्ठ मूल्यों का चयन करता है।
6. समाज व संस्कृति मानवीय मूल्यों को मौलिक प्रतिमान प्रदान करते हैं।
7. मूल्यों में वैयक्तिकता, विभिन्नता और अनूठापन पाया जाता है जिसका चयन व्यक्ति अपनी बुद्धि आवश्यकता, आदत, क्षमता आदि के आधार पर करता है।
8. सामाजिक पर्यावरण, समूह, संस्था आदि में परिवर्तन के साथ–साथ मानवीय मूल्यों में भी परिवर्तन होते हैं।
9. मनुष्य के आदर्श मूल्यों, बौद्धिक कलात्मक एवं धार्मिक की जड़ मानव की अन्तर्दृष्टि, परानुभूति और सहयोग में निहित होती है।

मूल्यों के प्रकार–

मुकर्जी ने मूल्यों के निम्न प्रकार बताये हैं–

1. तात्कालिक मूल्य–

समाज की तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले सामाजिक मूल्यों को तात्कालिक मूल्य कहते हैं।

2. विशिष्ट सामाजिक मूल्य–

व्यक्ति समाज की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए जिन मूल्यों का निर्धारण करता है उनको विशिष्ट सामाजिक मूल्य कहते हैं।

3. सार्वलौकिक मूल्य–

ऐसे मूल्य जो समाज व व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करते हैं और जिनका विकास सार्वलौकिक रूप से मान्य कुछ लक्ष्यों तथा आदर्शों के अनुसार होता है, वे सार्वलौकिक मूल्य कहलाते हैं।

4. अन्तर्निहित मूल्य–

जो मूल्य समाज और व्यक्ति के आन्तरिक जीवन में समाहित रहते हैं उनको अन्तर्निहित मूल्य कहते हैं।

5. आदर्शात्मक मूल्य–

जिन सामाजिक मूल्यों का विकास किसी आदर्श प्राप्ति के साधनों के रूप में होता है उन्हें मुकर्जी आदर्शात्मक मूल्य कहते हैं।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि मुकर्जी ने समाजशास्त्र की विषयवस्तु सामाजिक मूल्यों को माना है। उनका मत था कि किसी भी समाज व्यवस्था को समझना है तो हमें उस समाज के मूल्यों को समझना होगा। जिस समाज में जितने अधिक मूल्य होंगे वह समाज उतना ही अधिक विकसित होगा। उन्होंने भारतीय समाज में सामाजिक, ऐतिहासिक व सांस्कृतिक अन्तर्निर्भरता को परखने के लिए सरंचनात्मक प्रकार्यात्मक तथा तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किया। मुकर्जी द्वारा स्थापित मूल्यों का सिद्धान्त आज भी प्रासंगिक है।

महत्वपूर्ण बिन्दु–

- भारत में समाजशास्त्र की स्थापना मुम्बई विश्वविद्यालय में सन् 1919 में हुई।
- जी.एस. घुर्ये भारत के पहले समाजशास्त्री थे।
- जी.एस. घुर्ये ने भारतीय जाति व्यवस्था पर अध्ययन किया।
- डी.पी. मुकर्जी अपने आप को मार्क्सवादी कहना पसन्द करते थे।
- मुकर्जी ने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के आधार पर भारतीय परम्पराओं का अध्ययन किया।
- परम्पराओं में द्वन्द्व वाद प्रतिवाद संवाद के रूप में ही होता है।
- अक्षय कुमार रमणलाल देसाई का जन्म गुजरात के वडोदरा में 16 अप्रेल 1915 में हुआ था।
- वे एक क्रान्तिकारी विचारधारा के समर्थक थे।
- देसाई ने राज्य को पूंजीपतियों का हितेषी बताया।
- एम.एन. श्रीनिवास का पूरा नाम मैसूर नरसिम्हाचार श्रीनिवास था।
- श्रीनिवास ने कर्नाटक के रामपुरा गांव के बारे में अपनी स्मरण शक्ति के आधार पर लिखा था।
- श्रीनिवास ने यह स्थापित करने का प्रयास किया कि औद्योगिकरण व यांत्रिक उपकरणों के कारण गांव की आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में परिवर्तन हुआ है।
- राधाकमल मुकर्जी का जन्म 7 दिसम्बर 1889 में बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले के बरहामपुर कस्बे में हुआ।
- उन्होंने मूल्यों के समाजशास्त्र को स्थापित किया।
- उनका मूल्यों का सिद्धान्त संरचनात्मक प्रकार्यात्मक पद्धति द्वारा स्थापित किया गया है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. मुम्बई विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र के प्रथम प्रोफेसर कौन थे ?
   (अ) जी.एस. घुर्ये (ब) पैट्रिस गिडीज
   (स) एम.एन. श्रीनिवास (द) ए.आर. देसाई
2. घुर्ये कब मुम्बई विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बने ?
   (अ) 1920 (ब) 1922
   (स) 1924 (द) 1934
3. घुर्ये ने जाति की कितनी विशेषताएं बतलाई ?
   (अ) 4 (ब) 6
   (स) 8 (द) 10
4. डी.पी. मुकर्जी ने किसे समाजशास्त्र की विषयवस्तु माना है ?
   (अ) परम्परा (ब) द्वन्द्व
   (स) संस्कृति (द) आधुनिकीकरण
5. मुकर्जी ने परम्पराओं को समझाने के लिए कौनसी पद्धति का प्रयोग किया ?
   (अ) प्रकार्यात्मक (ब) संरचनात्मक
   (स) मार्क्सवादी द्वन्द्वात्मक
   (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं
6. परम्परा का तात्पर्य है–
   (अ) संस्कृति का हस्तान्तरण
   (ब) भौतिक वस्तुओं का हस्तान्तरण
   (स) व्यापार का हस्तान्तरण
   (द) कोई नहीं
7. ए.आर. देसाई ने किस समाजशास्त्र के सान्निध्य में डाक्ट्रेट की उपाधि प्राप्त की ?
   (अ) गिडिज (ब) घुर्ये
   (स) आर.के. मुकर्जी (द) डी.पी. मुकर्जी
8. देसाई ने राज्य को क्या माना ?
   (अ) वर्ग (ब) सरकार
   (स) संस्था (द) राजनीतिक दल
9. देसाई के अनुसार राज्य किसका हितेषी है ?
   (अ) कृषक वर्ग (ब) श्रमिक वर्ग
   (स) दलित वर्ग (द) पूंजीपति वर्ग
10. एम.एन. श्रीनिवास ने किस विषय पर डाक्ट्रेट की उपाधि प्राप्त की ?
    (अ) रामपुरा गांव
    (ब) दक्षिण भारत के ब्राह्मण
    (स) दक्षिण भारत के कुर्ग
    (द) दक्षिण भारत के दलित
11. श्रीनिवास की पुस्तक रिमेम्बर्ड विलेज कैसे लिखी ?
    (अ) तथ्यों के आधार पर (ब) पाठीय परिप्रेक्ष्य पर
    (स) क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य पर (द) स्मरण शक्ति पर
12. श्रीनिवास ने अपने गांव के अध्ययन में किस कारण से जाति व्यवस्था में जातियाँ एक दूसरे पर निर्भर रहती है? बताया।
    (अ) जजमानी व्यवस्था (ब) जातीय संघर्ष
    (स) आपसी सहयोग (द) कोई नहीं
13. लखनऊ विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र की स्थापना किसने की थी ?
    (अ) डी.पी. मुकर्जी (ब) आर.के मुकर्जी
    (स) एम.एन.श्रीनिवास (द) ए.आर. देसाई
14. आर.के. मुकर्जी ने किसे समाजशास्त्र की विषयवस्तु माना?
    (अ) परम्परा (ब) गांव
    (स) जाति (द) मूल्य
15. भारत में मूल्यों का समाजशास्त्र के जनक कहे जाते हैं?
    (अ) आर.के मुकर्जी (ब) डी.पी. मुकर्जी
    (स) एम.एन. श्रीनिवास (द) जी.एस. घुर्ये

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. जाति का अध्ययन जी.एस. घुर्ये ने कौनसी पुस्तक में किया ?
2. जाति एक अन्तर्विवाही समूह है। सही/गलत
3. किस समाजशास्त्री के प्रजाति के विचार से घुर्ये प्रभावित हुए ?
4. डी.पी. मुकर्जी ने भारतीय समाज का विश्लेषण किस परिप्रेक्ष्य से किया ?
5. डी.पी. मुकर्जी के अनुसार परम्पराओं में परिवर्तन किस आधार पर होता है ?
6. किन आधारों पर डी.पी. मुकर्जी ने भारतीय समाज में परम्पराओं में परिवर्तन को दर्शाया है।
7. आई.सी. एस.एस.आर. का पूर्ण रूप लिखिये।
8. ए.आर. देसाई की प्रथम पुस्तक का नाम बताइये ?
9. देसाई के अनुसार भारत में पूंजीवाद कब विकसित हुआ?
10. एम.एन. श्रीनिवास को किसने रामपुरा गांव पर पुस्तक स्मरण के आधार पर लिखने के लिये प्रोत्साहित किया।
11. रामपुरा गांव के व्यक्तियों का मुख्य व्यवसाय क्या था?
12. एम.एन. श्रीनिवास ने किसे भारतीय समाज का केन्द्रीय तत्व माना ?
13. आर.के मुकर्जी ने किस विश्वविद्यालय में लम्बे समय अपनी सेवाएं दी ?
14. आर.के मुकर्जी की सामाजिक मूल्यों पर प्रमुख पुस्तक कौनसी है ?
15. आर.के. मुकर्जी के अनुसार किस सामाजिक संगठन में

सामाजिक मूल्यों का अभाव पाया जाता है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. घुर्ये ने जाति को कैसे परिभाषित किया ?
2. घुर्ये द्वारा दी गई जाति की विशेषताओं को बताइये ?
3. घुर्ये ने प्रजाति को किस रूप में समझाया है ?
4. डी.पी. मुकर्जी के परम्पराओं के परिवर्तन के सिद्धान्त की विवेचना कीजिये।
5. मुकर्जी के अनुसार परम्पराओं में द्वन्द्व कैसे होता है ?
6. क्यों मुकर्जी ने परम्पराओं को भारतीय समाजशास्त्र की विषयवस्तु माना है ?
7. राज्य क्या है ?
8. क्या राज्य एक वर्ग है ?
9. रजनी कोठारी ने किन आधारों पर ए.आर. देसाई के राज्य की अवधारणा की आलोचना की है?
10. गांव को एम.एन. श्रीनिवास ने कैसे परिभाषित किया ?
11. गांव की विशेषताएँ बताइये ?
12. भारतीय गांवों में परिवर्तन के कारणों को बताइये ?
13. सामाजिक मूल्य को परिभाषित कीजिये ?
14. सामाजिक मूल्यों के क्या नियम होते हैं ?
15. सामाजिक मूल्यों के सोपानों का वर्णन कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. जी.एस. घुर्ये के जाति सम्बन्धी विचार पर एक लेख लिखिये ?
2. डी.पी. मुकर्जी की परम्पराओं की अवधारणा पर प्रकाश डालिये ?
3. ए.आर. देसाई की राज्य की अवधारणा का समाज में भूमिका को समझाइये ?
4. 'स्मरण रखा गया गांव' नामक पुस्तक की विवेचना कीजिये?
5. आर.के. मुकर्जी के सामाजिक मूल्यों के सिद्धान्त का विश्लेषण कीजिये ?

उत्तरमाला–1. (ब) 2. (द) 3. (ब) 4. (अ) 5. (स) 6. (अ) 7. (ब) 8. (अ) 9. (द) 10. (स) 11. (द) 12. (अ) 13. (ब) 14. (द) 15. (अ)